गायत्री का शक्ति स्रोत

सविता देवता

गायत्री का शक्ति स्त्रोत-सविता देवता

सावित्री और सविता का सम्बन्ध

गायत्री वेद-जननी चारों वेदों की माता होते हुए एक वेद-मंत्र भी है। वेद के हर मंत्र का एक छन्द, एक ऋषि और एक देवता होता है। उनका स्मरण उच्चारण करते हुए विनियोग किया जाता है। गायत्री महामंत्र का गायत्री छन्द-विश्वामित्र ऋषि और सविता देवता है। सविता बोल-चाल की भाषा में सूर्य को कहते हैं। सविता की अधिष्ठात्री देवी होने के कारण गायत्री का दूसरा नाम सावित्री भी है। सविता और सावित्री का युग्म प्रख्यात है। कहते हैं, सावित्री में जो शक्ति है, वह सविता की है। यों सविता, परब्रह्म परमात्मा को भी कहते हैं और उसकी प्रेरक विधेयक, निर्मात्री, संचारिणी, आह्लादिनी, चेतना-शक्ति को गायत्री को सावित्री कहा जा सकता है। यह ज्ञान-दृष्टि हुई। विज्ञान-दृष्टि में सविता को परमात्मा का तेजपुञ्ज ब्रह्म बताते हैं, जिसके प्रभाव और प्रकाश में यह सारा दृश्य जगत् सक्रिय रहता है। उस सविता की समग्र क्षमता एवं स्थिति की-प्राण-प्रक्रिया को सावित्री माना गया है।

शरीर और प्राण में जो संबंध है, वही सविता और सावित्री में है। प्राणी के अस्तित्व को प्रकाश एवं अनुभव में लाने के लिए शरीर चाहिए और शरीर सजीव बना रहे, उसके लिए उसमें प्राण की स्थिति आवश्यक है। दोनों का 'अन्योन्याश्रय' सम्बन्ध है। एक के बिना दूसरे की गति नहीं, स्थिति नहीं, उपयोगिता नहीं, शोभा नहीं। इसी प्रकार सविता और सावित्री एक दूसरे के लिए जुड़े हुए हैं। दोनों का एक मिश्रित युग्म है। अलङ्कार रूप से सावित्री को, सविता की पत्नी भी कहते हैं।

मोटे अर्थ में यह प्रातः उदय होने वाला, सायंकाल अस्त होने वाला, प्रकाश और गर्मी देने वाला, अग्नि पिण्ड भी सूर्य है- सविता है। उसकी भी अपनी शक्ति एवं क्षमता है। इस संसार का सारा क्रिया-कलाप उसी के

प्रभाव से हो रहा है। इसलिए उसकी स्थूल जगत् में विभिन्न प्रकार की हलचलें उत्पन्न करने वाली क्षमता को लौकिक सावित्री कहा जा सकता है। वैज्ञानिक इसी अदृश्य और अविज्ञात महाशक्ति सावित्री के विभिन्न पक्षों का अनुसंधान आविष्कार करने में सृष्टि के आदि से लेकर अद्यावधि पर्यन्त प्रयत्नशील हैं। उन्होंने बहुत कुछ पाया भी है।

अग्नि-तत्त्व का पता लगाकर मनुष्य ने जिस दिन उसका उपयोग जाना, उस दिन उसने ऐसा अनुभव किया मानो उसने किसी महान् शक्तिशाली देवता को अपने घर-आँगन में प्रतिष्ठित रहने के लिए मना लिया हो। अग्नि के आविष्कार ने बन्दरों की तरह अस्त-व्यस्त जीवन व्यतीत करने वाले मानव प्राणी को व्यवस्थित बनाने में महान् योगदान दिया। इसके उपरान्त बर्तुलाकार लुढ़कने से उत्पन्न होने वाली गतिशीलता का पता लगाकर उसने पहिये का निर्माण किया इससे विभिन्न प्रकार के वाहन और यंत्र बनाना सम्भव हो सका।

आज तो बिजली, भाप, ईथर, अणु आदि क्षेत्रों में काम करने वाली सहस्रों शक्तियों को जान लिया गया है और उनके आधार पर विज्ञान के चरण द्रुतगति से अग्रसर हो रहे हैं। अन्यान्य ग्रह-नक्षत्रों पर चढ़ाई करने की योजनाएँ बन रही हैं, इस धरती पर एक-से-एक अद्भुत आविष्कारों की तैयारी है, मनुष्य शरीर का कायाकल्प करके उसे चिरस्थायी बनाने की योजना है। यह सावित्री शक्ति के कतिपय पक्षों की जानकारी का परिणाम है। सावित्री-प्रकृति चेतना के बारे में जितना अब तक जाना जा सका है, उससे अभी असंख्य गुना जानना शेष है। सीमित बुद्धि वाला मानव प्राणी अनन्तकाल तक नई-नई उपलब्धियाँ प्राप्त करता रहे, तो भी प्रकृति की असीम शक्तियों की पूरी तरह जानकारी प्राप्त कर सकना सम्भव न हो सकेगा। सावित्री का भाण्डागार अपरिमित है। इतना अपरिमित जिसकी कल्पना भी हम पूरी तरह नहीं कर सकते।

सावित्री-सविता की शक्ति है। यह अग्नि-पिण्ड सूर्य इस पृथ्वी पर जिस प्रकार की शक्तियों का वितरण-विकिरण करता है, उसी की खोज-

बीन में हम लगे हैं। पर यही सूर्य अन्य अनेक ग्रह-नक्षत्रों पर वहाँ की स्थिति के अनुरूप अन्यान्य प्रकार की विचित्र और विलक्षण प्रकार की शक्तियों का सृजन करता है। यदि इन सब सूर्य के प्रभाव से प्रभावित ग्रह-नक्षत्रों तक पहुँच सकना हमारे लिए सम्भव हो सके, तो पता चले कि हमारी इस छोटी सी पृथ्वी पर जो विज्ञान अब तक प्रकाश में आया है, उससे सर्वथा भिन्न प्रकार का वैज्ञानिक-वातावरण उन ग्रह-पिण्डों पर फैला पड़ा है।

हम लोग पृथ्वी के आकर्षण में जितना भार अनुभव करते हैं, आकर्षण रहित ग्रहों में उतना बिलकुल भी न होगा। पक्षियों की तरह हर कोई वहाँ आकाश में सुगमतापूर्वक उड़-उछल सकता होगा। तब वहाँ इस संबंध में जो वैज्ञानिक नियम कार्य में आ रहे होंगे, वे हमारी पृथ्वी पर प्रचलित नियमों से सर्वथा भिन्न होंगे। यह एक उदाहरण मात्र है। सृष्टि में फैली पड़ी असीमित शक्तियाँ पृथ्वी पर ही इतनी व्यापक हैं कि उसकी सम्पूर्ण खोज मनुष्य के वर्तमान साधनों द्वारा सम्भव नहीं, फिर सविता के विस्तृत प्रभाव-क्षेत्र ग्रह-नक्षत्रों में बिखरी पड़ीं विचित्र स्तर की शक्तियों की जानकारी एवं उससे लाभान्वित होने की सुविधा तो मिल ही कैसे सकेगी ? कहने का तात्पर्य इतना भर है कि चमकने वाले उदीयमान अग्नि-पिण्ड-सूर्य की (सविता की) क्षमता, (सावित्री) जब इतनी विस्तृत है, तो असली सविता, परब्रह्म परमात्मा की पञ्चतत्त्वों से अत्यन्त ऊँचे स्तर की चेतना के-सावित्री के बारे में तो कहा ही कैसे जाय ?

वैज्ञानिक अपनी प्रयोगशालाओं के माध्यम से प्रकृति की विलक्षणताओं का-सावित्री की गरिमा में-यत्किंचित् ज्ञान एवं उपयोग जानने का प्रयोग करते और जो उपलब्धियाँ प्राप्त हो जाती हैं, उनसे सांसारिक सुविधाएँ बढ़ाने का प्रयत्न करते हैं। इसी स्तर पर एक वैज्ञानिक प्रयोग आत्म-विद्या विशारद योगीजन भी करते हैं। वे अपने शरीर एवं मन की प्रयोगशाला में प्रस्तुत अद्भुत अविज्ञात शक्ति संस्थानों की सहयता से प्रकृति की सूक्ष्मता के साथ अपना संबंध जोड़ते हैं और वहाँ से वैसी ही

विलक्षण उपलब्धियाँ प्राप्त कर लेते हैं, जैसे गोताखोर समुद्र में डुबकी लगाकर वहाँ छिपी पड़ी रत्न-राशि को बटोरते रहते हैं। तथाकथित ऋषि-मुनियों का आधार यही है।

जो कार्य किन्हीं शक्तिशाली यन्त्रों के द्वारा हो सकता है, वही कार्य शरीर संस्थान के वैज्ञानिक प्रयोग द्वारा भी हो सकता है। इसी प्रणाली का नाम 'तन्त्र' है। जिस प्रकार बन्दूक चलाकर किसी का प्राण हरण किया जा सकता है, वैसे ही तन्त्रोक्त 'कृत्या' से भी अनिष्ट उत्पन्न हो सकता है। जिस प्रकार विद्युत् सम्बन्धों से धातुओं के स्वरूप को बदला जा सकता है, उसी प्रकार ताँबे को सोने में परिणत करने में सफलता प्राप्त की जा सकती है। कितने ही सिद्ध पुरुष ऐसा करते भी रहे हैं। नागार्जुन, रावण आदि ऐसे ही असुर सम्प्रदाय के तान्त्रिक वैज्ञानिक थे, जिन्होंने निर्धारित तपश्चर्यायें करके शरीरों से इतनी अणुशक्ति संचालित कर ली थी कि वे अपने मनोबल के द्वारा अभीष्ट वस्तुएँ तथा परिस्थितियाँ उत्पन्न कर लेते थे।

दक्षिणमार्गी ऋषि-मुनि इसी प्रयोजन को अपने ढङ्ग की सात्विक योग साधनाओं से सम्पन्न करते थे। इसलिए उनकी पद्धति मंत्र-योग कहलाती थी। दक्षिण और वाममार्ग में सात्त्विक और तामस का अंतर रहने के कारण उन्हें तंत्र- विद्या और मंत्र-विद्या का अलग-अलग नाम दिया है। जहाँ तक परिणामों का सम्बन्ध है, दोनों के प्रतिफल लगभग समान है। जो भौतिक लाभ मन्त्र-योगी उठा सकता है, वही चमत्कार उत्पन्न कर सकना तंत्र योगी के लिए भी सम्भव है। सविता की महाशक्ति सावित्री एक ही है, उससे सम्पर्क बनाने के अनेक तरीके हो सकते हैं, इसमें से एक तरीका शरीर यन्त्र को माध्यम बनाकर साधना विधान के प्रयोग का है, दूसरा वैज्ञानिक-प्रयोगशालाओं के माध्यम से उपकरणों एवं यन्त्रों के माध्यम से लाभान्वित होने का है।

आज यह तंत्र-विज्ञान उस क्षेत्र में काम करने वाले निष्ठावान् कार्यकर्त्ताओं के कारण सफलतापूर्वक काम कर रहा है। तंत्र और मंत्र क्षेत्रों के वैज्ञानिकों ने तपश्चर्या की कठोरता से डर कर मुँह मोड़ लिया, फलस्वरूप

वहाँ सुनसान ही दृष्टिगोचर हो रहा है। आवश्यकता इस बात की है कि वैज्ञानिक तत्परता के साथ इस क्षेत्र में भी काम किया जाता रहे और ऋषि-मुनियों की बातें कल्पना समझी जाने का अवसर न आने देकर उस विज्ञान को मानव जाति के कल्याण में प्रस्तुत किया जाय।

यहाँ प्रसङ्ग सविता और सावित्री का चल रहा है। पञ्च-भौतिक जगत् में यह उदीयमान सूर्य ही सविता है और उसके प्रभाव से उत्पन्न होने वाली अगणित शक्तियों का पुञ्ज ही सावित्री है। इस युग्म से हमें बड़ा लाभ होता है। उसी के प्रभाव से हम जीवित हैं और अभीष्ट साधन-सामग्री उपलब्ध कर रहे हैं। श्रुतियों में सूर्य को 'जगत् की आत्मा' बताया गया है। उसी से वह प्राण प्रादुर्भूत होता है, जिसके कारण प्राणियों के लिए शरीर धारण किये रह सकना, वनस्पतियों का उगना, पंच-तत्त्वों का सक्रिय रह सकना सम्भव है। यदि सूर्य ठण्डा हो जाय तो देखते-देखते यह धरती हिम-पिण्ड की तरह ठण्डी हो जाय और यहाँ सब निर्जीव हो जाएँ, जीवन का किंचित् लक्षण भी दिखाई न पड़े। इसलिए इस अग्नि-पिण्ड सविता का भी हमारे भौतिक जीवन में असाधारण महत्त्व है।

सविता की असाधारण रहस्यमयी शक्तियों का- सावित्री का उपयोग हम यंत्रों के माध्यम से तो कर ही रहे हैं। चाहें तो तन्त्र और मन्त्र योगों के द्वारा भी वैसे ही लाभ उठा सकते हैं, जैसे कि भौतिक-विज्ञान वाले उठा रहे हैं या उठाने की बात सोच सकते हैं। यह सूर्य-योग चाहे किसी भी विधि से किया जाय, भौतिक जीवन में सुविधाएँ बढ़ाने के लिए बड़ा उपयोगी सिद्ध होता रहा है, आगे यह उपयोगिता और भी बढ़ने की सम्भावना है।

असली सविता तो गायत्री मंत्र का देवता है- इस उदीयमान सूर्य से भी ऊँचा है। उसे असंख्य सूर्यों का सूर्य-परम शक्ति-स्रोत, इस सृष्टि का नियामक और परिपुष्ट कर्त्ता, विधाता, प्रजापति कहा जाता है, उसके साथ सम्बन्ध, सम्पर्क बना कर यदि सान्निध्य लाभ लिया जा सके, तो दृश्य सूर्य की अपेक्षा वह आध्यात्मिक सविता हमारे लिए असंख्य गुने सुख-साधन प्रस्तुत कर सकता है। परमात्मा की परम शक्ति गायत्री की-सविता की

अविच्छिन्न शक्ति सावित्री की– उपासना करके हम वह लाभ ले सकते हैं, जिसके लिए यह मानव शरीर उपलब्ध हुआ है। वस्तुतः गायत्री उपासना– सावित्री साधना ही हमारा जीवन लक्ष्य हो सकता है, होना चाहिए।

ऐसा भ्रम किसी को नहीं करना चाहिए कि गायत्री से सावित्री भिन्न हो सकती है। एक ही शक्ति के दो नाम हैं। जब वह शक्ति भौतिक प्रयोजनों की पूर्ति के लिए प्रयुक्त की जाती है, तब उसे सावित्री कहते हैं और जब वह आध्यात्मिक प्रयोजनों के लिए काम आती है, तब उसी को गायत्री कहने लगते हैं। मृत शरीर को जलाते समय जो अग्नि जलती है, वह 'लोहिता' और भोजन बनाने की भट्टी में जलने वाली को 'रोहिता' कहते हैं। लोहिता और रोहिता यह दो नाम प्रयोग में आने वाले विभाजन के अनुरूप हैं। वस्तुतः अग्नि एक ही है। इसी प्रकार उस महाशक्ति को परा–अपरा, सावित्री और गायत्री के नाम से पहचाना जाता है। सविता–तत्त्व के साथ सम्बद्ध होने के कारण उसे सावित्री कहा गया है। सावित्री का देवता होने के कारण उस परम–तत्त्व को सविता कहते हैं। यह गायत्री का ही स्वरूप है।

गायत्री में जिस वरेण्यं, भर्ग, देव, सविता का स्मरण, चिन्तन किया जाता है, वह परम तेजस्वी सर्व शक्तिमान्, सर्वेश्वरसविता, प्रसविता परमात्मा ही है। उस परमात्मा की सर्वतोमुखी, सर्वोपरि शक्ति को चाहे गायत्री कहें अथवा सावित्री, वस्तुतः एक ही महत्त्व से उसका प्रयोजन है। सावित्री और गायत्री की एकता के कुछ प्रमाण देखिये।

यश्चैवं विद्वानेवमेतां वेदानां मातरं सावित्री संपदमुपनिषदमुपास्त इति। – गोपथ ब्राह्मण १/३८

इस प्रकार विद्वान् वेदमाता को सावित्री के नाम से जानते हैं।

ओंकारपूर्विकास्तिस्त्रो महाव्याहृतयोऽव्ययाः।
त्रिपदा चैव सावित्री विज्ञेयं ब्रह्मणो मुखम्॥ –मनु० २.८१

ओंकार पूर्वक तीनों महाव्याहृतियों तथा त्रिपदा सावित्री मंत्र वेद का मुख कहा जाता है।

एकाक्षरम् परंब्रह्म प्राणायामाः परम् तपः।
सावित्र्यास्तु परम् नास्ति मौनात्सत्यं विशिष्यते॥

- मनु० २/८३

एक ओंकार ही परब्रह्म है, प्राणायाम मुख्य तप है, सावित्री से बढ़कर कोई शक्ति नहीं है और मौन की अपेक्षा सत्य-भाषण की महिमा विशेष है।

नमो नमस्ते गायत्रि! सावित्रि! त्वां नमाम्यहम्।
सरस्वति! नमस्तुभ्यं तुरीये! ब्रह्मरूपिणि॥

हे गायत्रि! हे सावित्रि! मैं आपको प्रणाम करता हूँ और मेरा आपके चरणों में बार-बार अभिवादन समर्पित है। हे सरस्वति! आपके लिए मेरा नमस्कार अर्पित है। हे तुरीये! आप ब्रह्म के स्वरूप वाली हैं।

नमस्ते देवि गायत्रि सावित्रि त्रिपदेक्षरे।
अजरे अमरे मातस् त्राहि मां भवसागरात्॥

(वशिष्ठसंहितायां तांत्रिक स्तोत्र)

हे तीन पदों वाली गायत्री, सावित्री देवि! हम आपको नमस्कार करते हैं। हे अजर-अमर माता! मेरी भवसागर से रक्षा करो।

सच्चिन्मयि! परे देवि! गायत्रि ब्रह्मरूपिणि।
आज्ञापय त्वं सावित्रि परिवारार्चनाय मे॥

हे सच्चिन्मयि! हे परे देवि! हे ब्रह्म के स्वरूप वाली गायत्री देवि! हे सावित्रि! अब आप मुझ सेवक को परिवारार्चन करने के लिए आज्ञा प्रदान करें।

समस्त देवताचक्र मुनिपितृगणावृते।
आरात्रिकं गृहाणेदं सावित्री मम सिद्धये॥

हे समस्त वेदों के समूह-मुनिगण और पितृगण आवृते! हे सावित्रि! अब मेरी सिद्धि के लिए इस आरात्रिक (आरती) को ग्रहण कीजिये।

नमस्ते सूर्य संकाशे सूर्यसावित्रिकेऽमले।
ब्रह्मविद्ये महाविद्ये वेदमातर्नमोऽस्तुते॥

हे सूर्य के समान रूप वाली! हे सूर्य सावित्रि! हे अमले! आप ब्रह्म

विद्या हैं, आप महाविद्या हैं तथा वेदों की माता हैं। आपके लिए मेरा प्रणाम समर्पित किया जाता है।

उपर्युक्त प्रमाणों में गायत्री-सावित्री को एक ही माना गया है। यदि इनमें थोड़ा अन्तर किया भी जाय तो वह इतना ही हो सकता है कि भौतिक प्रयोजनों में प्रयुक्त इस ब्रह्म शक्ति को सावित्री और अध्यात्म प्रयोजन में होने पर उसे गायत्री कहा जाय। सावित्री जप का लाभ स्वर्ग अर्थात् सुख-सुविधाओं का अभिवर्धन बताया गया है और गायत्री उपासना से मोक्ष लाभ अर्थात् वासना एवं तृष्णा के बन्धनों से छुटकारा मिलना प्रसिद्ध है।

कहा गया है कि-

सावित्री जाप्यनिरत: स्वर्गमाप्नोति मानव:।
गायत्री जाप्यनिरतो मोक्षोपायं च विदति॥ -शंख स्मृति १२.२९

सावित्री के जप करने वाले को स्वर्ग और गायत्री के जप करने वाले को मोक्ष की प्राप्ति होती है।

सावित्री का स्वरूप वर्णन करते हुए बताया गया है-

सावित्री त्रिपदा ज्ञेया षटकुक्षि: पञ्चशीर्षका।
अग्निवर्णमुखा शुक्ला पुण्डीरकदलेक्षणा।

- सूत संहिता-गायत्री विवरण

सावित्री तीन पाद, षटकुक्षि: और पाँच मस्तक वाली है। वह अग्निवर्ण की मुख वाली, शुभ्र और कमल नेत्रों वाली है।

दैविक, दैहिक और भौतिक इन तीनों क्षेत्रों में सावित्री का आधिपत्य होने के कारण उसे तीन पाद वाली कहा गया है। कहते हैं कि वामन भगवान् ने तीन चरणों में राजा बलि के तीनों लोक वाले राज्य को नाप लिया था। सावित्री के तीन पाद भी तीनों लोकों तक लम्बे हैं। अर्थात् उनके प्रभाव से तीनों लोकों में अपनी स्थिति सुख-शान्तिमय बनती है। तीन लोक आकाश, पाताल और पृथ्वी को भी कहते हैं। पर यहाँ दैविक, दैहिक, भौतिक अर्थात् आध्यात्मिक, शारीरिक और सम्पत्ति-परक तीनों ही क्षेत्रों में सावित्री का प्रकाश पहुँचता है और उस महाशक्ति की उपासना से इन सभी क्षेत्रों में आनन्द उल्लास की परिस्थितियाँ उत्पन्न होती हैं।

गायत्री का शक्ति स्त्रोत-सविता-देवता

गायत्री माता का ध्यान सदा सूर्य मण्डल के मध्य में विराजमान महाशक्ति के रूप में किया जाता है। 'सूर्य मण्डल मध्यस्था' विशेषण के साथ ही उसे समझा और समझाया जाता है। साकार उपासना करने वाले पुस्तक, पुष्प, कमण्डल धारण किये हुए मातृ-शक्ति का सूर्य-मण्डल के मध्य में विराजमान ध्यान करते हैं। निराकार उपासना करने वाले चिदाकाश एवं महदाकाश में प्रतिष्ठित तेज मण्डल के रूप में उसका ध्यान करते हैं। उपासना का क्रम निराकार हो अथवा साकार दोनों ही स्थितियों में सूर्य-मण्डल की स्थापना अनिवार्य रूप से रहेगी। प्रकाश के तेजोवलय को समन्वित किये बिना गायत्री महाशक्ति का ध्यान हो ही नहीं सकता।

गायत्रीं भावयेद्देवीं सूर्यासारकृताश्रयाम्।
प्रातर्मध्याह्नसायाह्ने ध्यानं कृत्वा जपेत्सुधीः ॥

– शकानन्दतरंगिणी ३/४/१

बुद्धिमान् मनुष्य को सूर्य के रूप में स्थित गायत्री देवी का प्रातः मध्याह्न और सायं, त्रिकाल ध्यान करके जप करना चाहिए।

जप के साथ ध्यान अनिवार्यतः किया जाता है। वह जप किस काम का जिसके साथ ध्यान जुड़ा हुआ न हो। नाम और रूप दोनों का जोड़ा है। भगवान् का नामोच्चारण करते समय उसके रूप की भी धारणा करनी पड़ती है। साकार उपासना करने वाला गायत्री माता को सूर्य मण्डल के मध्य में अवस्थित मानकर अथवा उनके मुखारविन्द के चारों ओर तेजमण्डल की भावना करके ध्यान का उद्देश्य पूरा करते हैं। निराकार उपासना करने वाले प्रकाश बिन्दु तथा उदीयमान सूर्य जैसे विशाल तेज मण्डल का ध्यान करते हुए जप के द्वारा उपासना क्रम चलाते हैं। गायत्री महामंत्र की उपासना विधि यही है, कहा है-

सविता सर्वभूतानां सर्वभावश्च सूयते।
सवनात्प्रेरणाच्चैव सविता तेन चोच्यते॥

सब प्राणियों में सब प्रकार के भावों को सविता उत्पन्न करता है। उत्पन्न और प्रेरणा करने से ही सविता कहा जाता है।

वरेण्यं वरणीयञ्च संसारभयभीरुभिः।
आदित्यान्तर्गतं यच्च भर्गाख्यं वा मुमुक्षुभिः॥

संसार के भय से भीत और मोक्ष की कामना वालों के लिए सूर्य-मण्डल के अन्तर्गत जो श्रेष्ठ तेज है, वह वन्दनीय है।

देवस्य सवितुर्यच्च भर्गमन्तर्गतं विभुम्।
ब्रह्मवादिन एवाहुर्वरेण्यम् तच्च धीमहि॥

सविता देव के अन्तर्गत तेज को ब्रह्मज्ञानी वरेण्य अर्थात् श्रेष्ठ कहते हैं, उसी का हम ध्यान करते हैं।

संध्यायोग में इसका और भी अधिक स्पष्टीकरण किया गया है और बताया गया है कि जिस भावना का हम ध्यान करते हैं, वह मन को एकाग्र करने के लिए कोई प्रकाश गोलक मात्र नहीं, वरन् वह परम तेजस्वी परमात्मा है, जो हमारी बुद्धि, अन्तःचेतना, भावना एवं आस्था को सन्मार्ग की ओर प्रेरित करता है।

चिन्तयामो वयं भर्गो धियो यो नः प्रचोदयात्।
धर्मार्थकाममोक्षेषु बुद्धि वृती पुनः पुनः॥

हम उस तेज का ध्यान करते हैं, जो हमारी बुद्धि में धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की बार-बार प्रेरणा करता है।

बुद्धेः बोधयिता यस्तु चिदात्मा पुरुषो विराट्।
सवितुस्तद्वरेण्यन्तु सत्यधर्माणमीश्वरम्॥

बुद्धि को सन्मार्ग पर लगाने वाला जो विराट् चिदात्मा पुरुष है, वही सत्य धर्म वाला ईश्वर रूप वन्दनीय सविता है।

अगस्त्य और पराशर ऋषियों ने भी इसी तथ्य की पुष्टि की है। गायत्री महामंत्र का ध्यान करते समय जिस सविता को धारण करने की प्रेरणा है, वह रोशनी एवं गर्मी ही नहीं देता, वरन् हमारी अन्तःचेतना को उत्कृष्टता की दिशा में वह प्रेरणा भी देता है, जिससे जीवनोद्देश्य को प्राप्त कर सकना सम्भव हो सके।

योो देवः सविताऽस्माकं धियो धर्मादिगोचराः।
प्रेरयेत्तस्य यद्भर्गस्तं वरेण्यमुपास्महे॥

– अगस्त्य

सविता नामक जो देवता हमारी बुद्धि को धर्मादि में लगाते हैं, उनके वन्दनीय तेज की हम उपासना करते हैं।

देवस्य सवितुर्भर्गो वरणीयञ्च धीमहि।
तदस्माकं धियो यस्तु ब्रह्मत्वेव प्रचोदयात्॥

– पाराशर

सविता देवता के प्रशंसनीय तेज का हम ध्यान करते हैं, जो हमारी बुद्धि को ब्रह्मत्व में प्रेरित करे।

प्रत्येक वेद मंत्र का एक देवता है, जिसकी शक्ति से ही यह मन्त्र सिद्ध एवं फलित होता है। गायत्री महामंत्र का देवता सविता है। तत् सवितुः इस आरम्भिक पद में उस सविता का उल्लेख करते हुए आगे उसी का ध्यान और धारणा करने का निर्देश दिया गया है। गायत्री की शक्ति इस सविता देवता पर ही अवलम्बित है।

सविता कहते हैं 'सूर्य' को। गायत्री को एक प्रकार से सूर्य का मंत्र भी कहा जाता है। 'पुनातु मां तत् सवितुर्वरेण्यं' इन अन्तिम पद वाले स्तोत्र में सूर्य देवता का ही स्तवन किया गया है। इसलिए कितने ही उपासक सूर्य की आराधना के लिए गायत्री का उपयोग करते हैं। गायत्री को माता के रूप में मानने वाले साधक भी उसका रूप 'सूर्य मण्डल मध्यस्था' सूर्य मण्डल के बीच में अवस्थित स्वरूप का, मातृदेवी के रूप में ही ध्यान करते हैं। किसी भी रूप में गायत्री मंत्र की उपासना की जाय 'सूर्य' का उससे अविच्छिन्न सम्बन्ध अनिवार्य रूप से रखना होगा। गायत्री का देवता ही सूर्य है, तो उसका स्वरूप भी साथ में होना स्वाभाविक है।

स्थूल विज्ञान की दृष्टि से सूर्य एक अग्निपिण्ड है, जो आकाश में अवस्थित अनन्त आकाश गंगाओं में से 'स्पाइरल' नामक एक आकाश गंगा के परिवार के लगभग डेढ़ खरब तारों में से एक छोटा सा तारा मात्र है।

इसका व्यास करीब ९ लाख मील अर्थात् पृथ्वी की अपेक्षा ११० गुना बड़ा है। उसके परिवार में ९ ग्रह हैं तथा प्रत्येक ग्रह के अनेक उपग्रह हैं। बुध, शुक्र और पृथ्वी का एक-एक चन्द्रमा है। मंगल के दो, बृहस्पति के बारह, शनि के नौ, वरुण के पाँच, हरिग्रह के दो और पीतग्रह के चार। इनके अतिरिक्त हजारों छोटे ग्रह तथा ग्रहिकाएँ एवं अगणित धूमकेतू पुच्छल तारे इस सौर परिवार में सम्मिलित हैं। यह सब सूर्य की प्रबल आकर्षण शक्ति में जकड़े हुए उसकी परिक्रमा करते रहते हैं। अपने इस सारे परिवार को लेकर सूर्य 'स्पाइरल' आकाश गंगा की परिक्रमा करता है। इस एक परिक्रमा में उसे पच्चीस करोड़ वर्ष लगते हैं। ज्योतिषियों का अनुमान है कि जब से सूर्य पैदा हुआ है, तब से अब तक वह सोलह ऐसी परिक्रमाएँ कर चुका है।

स्थूल पदार्थ विज्ञान अभी तक सूर्य के सम्बन्ध में ऐसी ही जानकारियाँ एकत्रित कर सका है तथा उसकी किरणों से सप्त रंग, विद्युत् प्रवाह एवं आणविक विकिरण का कुछ हद तक पता लगा सका है। इस दिशा में और भी जानकारी एकत्रित की जा रही है, पर यह सब सूर्य के स्थूल रूप का ही परिचय है। जैसे मनुष्य की सत्ता का विश्लेषण करने के लिए उसके शरीर संबंधी जानकारी प्राप्त कर लेना पर्याप्त नहीं माना जा सकता, उसकी विद्या, बुद्धि, गुण, कर्म, स्वभाव, प्रवृत्ति, भावना, चेतना एवं आत्मा का पता लगाना भी आवश्यक होता है। इसके बिना केवल शरीर विश्लेषण के आधार पर जो परिचय प्राप्त किया जाएगा, वह अधूरा ही रहेगा। इसी प्रकार सूर्य की आत्मा को भी जानना आवश्यक है। इसके बिना गायत्री मंत्र का साधक इस अग्नि पिण्ड सूर्य के जान लेने मात्र से अपना प्रयोजन पूर्ण नहीं कर सकता।

एक अनन्त, चैतन्य जीवन एवं शक्ति का समुद्र इस विश्व में लहरा रहा है। जड़ प्रकृति का परमाणु संकुल, उस चेतन सत्ता की तरंगों से ही तरंगित होकर गतिवान् हो रहा है। जड़ पदार्थों में अपनी निज की कोई शक्ति या चेतना नहीं है। जब प्रलय होती है, तो वह सब राख के ढेर के समान निष्प्राण, गतिहीन हो जाता है। संसार में जो कुछ हलचल हो रही

दीखती है, उसके मूल में वह चेतना का महाभाण्डागार ही काम कर रहा है। जैसे देह के निर्जीव कलेवर में आत्मा का ही संसार गतिशील रहता है। वैसे ही जड़ प्रकृति में जो हलचल होती दिखाई पड़ती है, उसका कारण वह चेतना सागर ही है, जिसके लिए गायत्री मंत्र में 'सविता' शब्द का प्रयोग हुआ है। यह प्रकाश पिण्ड सूर्य उस सविता का एक बाह्य शरीर-स्थूल कलेवर मात्र है।

सूर्य की गर्मी और रोशनी हर किसी को दीखती है, यह उसकी स्थूल शक्ति है। इसके भीतर एक और सूक्ष्म सत्ता उसके अन्तर में मौजूद है, वह जीवन शक्ति प्राणियों को उत्पन्न करने, पोषण और अभिवर्धन करने का विश्वव्यापी कार्यक्रम उस सूर्य की आत्मा पर ही आधारित है। रोशनी और गर्मी मशीनों से भी पैदा की जा सकती है, पर उनसे जीवन नहीं मिल सकता। वैज्ञानिक जानते हैं कि यदि सूर्य न होगा, तो पृथ्वी पर जीवन का भी कोई चिह्न शेष न रहेगा।

श्रुति में सूर्य को 'संसार की आत्मा' बताया गया है। आकाश में दौड़ने वाले सूर्य के बाह्य कलेवर को गर्मी और रोशनी का पिण्ड कह सकते हैं, पर उसकी आत्मा जगत् का जीवन है। इस जीवन शक्ति का दूसरा नाम प्राण-शक्ति भी है। सूर्य की आत्मा को ही महाप्राण कहा गया है। उस महाप्राण की बूँदें विभिन्न प्राणियों में अल्पप्राण के रूप में दृष्टिगोचर होती हैं।

'गय' कहते हैं प्राण को। 'त्री' कहते हैं त्राण, उद्धार, उत्थान करने वाली को। प्राणशक्ति का उत्थान करने वाली विद्या को गायत्री कहा जाता है। अपने देवता सविता से गायत्री महामंत्र में प्राण-शक्ति अभिप्रेत होती है और उसी का एक अंश अपने में धारण करके गायत्री उपासक अपने आपको धन्य बनाता है।

सूर्य के माध्यम से प्रस्फुटित होने वाला महाप्राण, परब्रह्म परमात्मा का वह अंश है, जिससे इस विश्व-ब्रह्माण्ड का संचालन होता है। एक से अनेक बनने का ब्रह्मसंकल्प ही महाप्राण बन कर फूट पड़ा है। यह निर्झर

जिस दिन तक झर रहा है, उसी दिन तक सृष्टि है। जिस दिन परम प्रभु उस सङ्कल्प को समेट लेंगे, उसी दिन महाप्राण शान्त हो जायगा और फिर महाशून्य के अतिरिक्त और कुछ भी शेष न रहेगा। यह ब्रह्मसंकल्प-महाप्राण-परब्रह्म की सत्ता से भिन्न कोई बाहरी पदार्थ नहीं, वरन् उसी का एक अविच्छिन्न अंग है। परमात्मा अनन्त है, उसकी सत्ता असीम है। उस अनन्त असीम, अचिन्त्य का एक भाग जो सृष्टि के संचालन में, उसकी समस्त प्रक्रियाओं को सुव्यवस्थित रखने में लगा हुआ है, उस महाप्राण को ही सूर्य की आत्मा-सविता देवता समझना चाहिए। प्राणी का, जीवधारी का सीधा सम्बन्ध इसी से है।

जीवन की बाह्य और आन्तरिक सुव्यवस्था के लिए, प्रगति और शान्ति के लिए परब्रह्म की महाप्राण सत्ता को अधिकाधिक मात्रा में उपलब्ध करना प्राणी के लिए अभीष्ट होता है। इसी प्रयोजन की पूर्ति के लिए गायत्री महामंत्र द्वारा सविता देवता की उपासना की जाती है।

यह भ्रम नहीं रहना चाहिए कि गायत्री महामंत्र की शक्ति इस अग्नि पिण्ड सूर्य पर अवलम्बित है। यह तो रोशनी और गर्मी मात्र देता है। यह सब तो बिजली की मशीनों से भी प्राप्त किया जा सकता है। इतने मात्र के लिए किसी उपासना की क्या आवश्यकता थी? गायत्री सूर्य की आत्मा सविता शक्ति के साथ उपासक को सम्बन्धित करती है, जिसके द्वारा वह परब्रह्म महाप्राण को अपने शरीर और अन्तःकरण में आवश्यक मात्रा में धारण करके लौकिक सुख एवं आत्मिक शान्ति को अनुभव करता हुआ जीवन के परम लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है।

यह महाप्राण जब शरीर क्षेत्र में अवतीर्ण होता है, तो आरोग्य, आयुष्य, तेज, ओज, बल, उत्साह, स्फूर्ति, पुरुषार्थ, इन्द्रिय शक्ति के रूप में दृष्टिगोचर होता है। जब वह मनःक्षेत्र में अवतीर्ण होता है, तो उत्साह, स्फूर्ति, प्रफुल्लता, साहस, एकाग्रता, स्थिरता, धैर्य, संयम आदि सद्गुणों के रूप में देखा जा सकता है। जब उसका अवतरण आध्यात्मिक क्षेत्र में होता है, तो त्याग, तप, श्रद्धा, विश्वास, दया, उपकार, प्रेम, विवेक आदि के रूप

में दिखाई देता है। तीनों ही क्षेत्र उस महाप्राण से जैसे-जैसे भरते जाते हैं, वैसे ही मनुष्य अपूर्णता से पूर्णता की ओर, लघुता से विभुता की ओर, तुच्छता से महानता की ओर बढ़ने लगता है। आत्म कल्याण का, लक्ष्य प्राप्ति का यही मार्ग है। गायत्री के द्वारा सविता देवता को-महाप्राण को उपलब्ध करने का प्रयोजन ही यही है।

सविता देवता यद्यपि सूर्य का ही दूसरा नाम है, पर यह भली प्रकार समझ लेना चाहिए कि जो अन्तर शरीर और आत्मा का है, वही सूर्य और सविता का है। गायत्री महामंत्र का देवता सूर्य वही महाप्राण है। उसका स्पष्टीकरण शास्त्रों में स्थान-स्थान पर विस्तारपूर्वक किया गया है।

योऽसावादित्ये पुरुषः सोऽसावहम्। - मैत्रायण्युपनिषद् ६.३५

जो सूर्य है, सो मैं हूँ।

प्राणो वा अर्कः। - शतपथ १०/४/१/२३

प्राण ही सूर्य है।

स एष वैश्वानरो विश्वरूपः प्राणोऽग्निरुदयते।

-प्रश्नोपनिषद् १/७

सूर्य के उदय होने पर सारे विश्व में प्राणाग्नि का संचार होने लगता है।

सहस्त्ररश्मिः शतधा वर्तमानः।
प्राणः प्रजानामुदयत्येष सूर्यः॥

- प्रश्नोपनिषद् १/८

प्राण ही सहस्त्र रश्मियों वाला, सैकड़ों प्रकार से वर्तमान प्रजा को उत्पन्न करने वाला सूर्य है।

योऽसौ तपन्नुदेति स सर्वेषां भूतानां प्राणानां दातोदेति।

- श्रुति

इस सूर्य से ही सब प्राणियों को प्राण प्राप्त होता है।

आदित्यो ह वै बाह्यःप्राण उदयत्येषह्येनं चाक्षुषं प्राणमनुगृह्णानः।

- प्रश्नोपनिषद् ३/८

बाह्य जगत् में यह प्राण आदित्य रूप होकर दशों दिशाओं में विद्यमान है।

विश्वरूपं हरिणं जातवेदसं,
परायणं ज्योतिरेकं तपन्तम्।
सहस्त्ररश्मिः शतधा वर्तमानः,
प्राणः प्रजानामुदयत्येष सूर्यः॥

-प्रश्नोपनिषद् १/८

विश्वरूप, व्यापक, सर्वाधार, प्रकाशवान्, तप्त किरणों वाला यह सूर्य समस्त जीवों का प्राण होकर उदय होता है।

सूर्याद् भवन्ति भूतानि सूर्येण पालितानि तु।
सूर्ये लयं प्राप्नुवन्ति यः सूर्यः सोऽहमेव च॥

- सूर्योपनिषद्

सूर्य से ही सब प्राणी उत्पन्न होते हैं, उसी से उनका पालन होता है, उसी में वे लय हो जाते हैं, जो सूर्य है सो ही मैं हूँ।

गायत्री का देवता-सूर्य-विश्व के जीवन का, ज्ञान और विज्ञान का केन्द्र है। अन्य समस्त देव शक्तियों का केन्द्र भी वही है। चारों वेदों में जो कुछ है, वह सब भी इस सविता शक्ति का विवेचन मात्र है। तप, श्रद्धा और साधना के द्वारा योगीजन इसे ही प्राप्त करने में संलग्न रहते हैं। नाम, रूप, सुविधानुसार कोई भी माना जाय, पर वस्तुतः यह सविता देवता ही सबका उपास्य है। उसी को प्राप्त करने के लिए प्रत्येक साधक को प्रयत्नशील होना पड़ता है। देखिये-

उद्यन्तं वादित्यमग्निरनु समारोहति।
सुषुम्नः सूर्यरश्मिः चन्द्रमा गन्धर्वः॥

-श्रुति

इस सूर्य के अन्तर्गत ही अग्नि, सुषुम्न, चन्द्र, गन्धर्व आदि हैं।

ऋग्भिः पूर्वाह्णेदिवि देवि ईयते,
यजुर्वेदेतिष्ठति मध्यअहः।

सामवेदेनास्तमये महीयते,

वेदेरसून्यस्त्रिभिरेति सूर्यः ॥ -श्रुति

यह सूर्य प्रातः ऋक् से, मध्याह्न को यजु से और सायंकाल साम से युक्त होता है।

ऋचोऽस्य मण्डलं सामान्यस्य मूर्तिर्यजूंषिच।

त्रयीमयोऽयं भगवान् कालात्मकलकृद्विभुः ॥

-सूर्य सिद्धान्त

ऋक् सूर्य मण्डल और यजु तथा साम उसकी मूर्ति है। वही काल रूप भगवान् है।

नत्वा सूर्य परंधाम ऋग् यजुः साम रूपिणम्।

-सूर्य पुराण

ऋक् यजु साम रूपी परंधाम सूर्य को नमस्कार है।

अथोत्तरेण तपसा ब्रह्मचर्येण श्रद्धया विद्ययात्मानमन्विष्या-दित्यमभिजयन्ते एदद्वै प्राणानामायतनमेतदमृतमभयमेतत्परायणमेतस्मान्न पुनरावर्तन्त इत्येषनिरोधः।

-प्रश्नोपनिषद् १/१०

तप, ब्रह्मचर्य, श्रद्धा तथा विद्या द्वारा जो आत्मा की खोज कर उस आदित्य को प्राप्त करते हैं, वे पुनः जन्म नहीं लेते, यह आदित्य ही प्राणों का आश्रय है वही मोक्ष है, वही पद है, जीव को उसी से परम आश्रय मिलता है।

भवद्भूतं भविष्यं च जंगमस्थावरं च यत्।

अस्यैकं सूर्यमेवैकं प्रभवं प्रलयं विदुः।

असतश्च सतश्चैव योनिरेषा प्रजापतिः।

तदक्षरं चाव्ययंच यच्चैतद् ब्रह्मशाश्वतम्।

कृत्वैवहि त्रिधात्मानमेषु लोकेषु तिष्ठति।

वेदान् यथायथं सर्वान् निवेश्य स्वेषु रश्मिषु।

- सूर्योपनिषद्

जो जड़-चेतन पदार्थ इस संसार में अब मौजूद है, भूतकाल में थे या भविष्य में होंगे, वे सभी सूर्य से उत्पन्न हुए और उसी में लीन होते हैं। यह सूर्य ही प्रजापति है। यह सत्-असत् की योनि है। अक्षर, अव्यय, शाश्वत, ब्रह्म यही है। यह तीनों लोकों में व्याप्त है, समस्त देवता इसी की किरणें हैं।

आदित्योह्यादि धूतत्वात् प्रसूत्या सूर्य उच्यते।
परंज्योतिः तमः पारे सूर्येऽयं सवितेति च॥

–सूर्य सिद्धान्त

वह समस्त जगत् का आदि कारण है। इसलिए उसे आदित्य कहते हैं, सब को उत्पन्न करता है, इसलिए सविता कहते हैं। अन्धकार को दूर करता है, इससे उसे सूर्य कहा जाता है।

अथादित्य उदयन्यत्प्राचींदिशं प्रविशति तेन प्राच्यान् प्राणान् रश्मिषु संनिधत्ते। यद्दक्षिणां यत् प्रतीचीं यदुदीचीं यदधो यदूर्ध्वं यदन्तरा दिशो यत्सर्वंप्रकाशयति तेन सर्वान् प्राणान् रश्मिषु संनिधत्ते।

– प्रश्नोपनिषद १/६

पूर्व में उदय होता हुआ सूर्य अपनी किरणों से पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण, नीचे, ऊपर तथा उनके कोणों की सभी दिशाओं को प्रकाशित करता है। उसकी किरणों द्वारा समस्त जगत् का प्राण धारण किया जाता है।

अपश्यं गोपामनिपद्यमान माच परा च पथिभिश्चरन्तम्।
स सध्रीचीः स विषूचीर्वसान आवरीवर्ति भुवनेष्वन्तः॥

– ऋग्वेद १.१६४.३१

मैंने प्राण को देखा है। साक्षात्कार किया है। यह प्राण सब इन्द्रियों का रक्षक है। यह कभी नष्ट नहीं होता। यह नाड़ियों द्वारा शरीर में दौड़ता रहता है। मुख और नासिका द्वारा यह आता और जाता है। यह शरीर में वायु रूप है, पर ब्रह्माण्ड में सूर्य रूप है।

इस सविता की उपासना में संलग्न ऋषि, मुनि योग के द्वारा अपनी आत्मा को तेजपुञ्ज महाप्राण परब्रह्म में प्रविष्ट करते हैं, शुकदेव जी अपनी

साधना को पूर्ण करते हुए जिस स्थिति में प्रविष्ट हुए उसका उल्लेख महाभारत में इस प्रकार मिलता है।

तस्माद् योग समास्थायत्यनत्वागृहकलेवरम्।
वायुभूतः प्रवेक्ष्यामि तेजोराशि दिवाकरम्॥

-महाभारत

शुकदेव जी ने कहा- मैं योग में स्थित होकर इस देह को त्याग कर तेजो-राशि सूर्य में होकर प्रवेश करता हूँ।

उपनिषद्कारों ने इस महाउ़पास्य सविता देवता की उपासना का निर्देश करते हुए उसकी महान् महत्ता पर भी प्रकाश डाला है और उसे आत्मिक मलीनताओं का निवारण कर्त्ता माना है।

सूर्यश्च मा मन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युकृतेभ्यः
पापेभ्यो रक्षन्ताम्। यद्रात्र्या पापमकार्षम्
मनसा वाचा हस्ताभ्याम्। पद्भ्यामुदरेण शिश्ना
रात्रिस्तदवलुम्पतु। यत् किंच दुरितं मयि
इदमहं माममृतयोनौ सूर्ये ज्योतिषि जुहोमि स्वाहा।

- (तै० अ० प्र० १० अ० २५)

जगत् का प्रेरक सूर्य उन पापों से मेरी रक्षा करे, जो क्रोधादि वृत्तियों द्वारा उत्पन्न हुए हैं। जो रात्रि में मैंने पाप किया है, मन, वाणी और हाथों द्वारा, पैरों, उदर और उपस्थेन्द्रिय द्वारा (किया है) रात्रि में वह लुप्त हो जाय। यह मैं अपने आपको अमृत की योनि में- जो कि सूर्य-ज्योति रूप परमात्मा है, उसमें- आहुति रूप देता हूँ-स्वाहा बोल कर देता हूँ।

य इह वाव स्थिरचरनिकराणां निजनिकेतनानां मनइन्द्रियासुर्गणानात्मनः स्वयमात्माऽन्तर्यामी प्रचोदयात्।

-ब्रह्मोपनिषद्

आप सबके आत्मा हो और अन्तर्यामी हो। जगत् में जितने चराचर प्राणी हैं, वे सब आपके ही आधार पर रहते हैं और उनके अचेतन जैसे मन, इन्द्रिय और प्राणों के आप ही प्रेरक हो।

त्रिकाल संध्या में प्रातः मध्याह्न, सायंकाल के लिए तीन प्रतीकों का उल्लेख है। प्रातः ब्राह्मी, मध्याह्न वैष्णवी और सांय शाम्भवी गायत्री के हंसारूढ़, गरुड़ारूढ़, वृषभारूढ़ स्वरूपों का वर्णन है। वस्तुतः यह तीन वेदों का ही त्रिविध स्वरूप है। सविता देवता प्रातः ऋग्वेद, मध्याह्न यजुर्वेद और सायंकाल सामवेद स्वरूप होता है। वेदों में जिन तीन विज्ञान का भण्डार है, उसे साधक के अन्तःकरण में अभिप्रेत करता है। ऋग् से ज्ञान योग, यजु से कर्मयोग, साम से भक्तियोग का सम्बन्ध है। सविता का ध्यान हमारी मनोभूमि को इन तीनों योगों की साधना के उपयुक्त बनाता है। इन्हीं तीनों तथ्यों का ब्रह्मा, विष्णु, महेश का रूप उल्लेख है। ऋग्-ब्रह्मा, यजु-विष्णु और साम-शिव है। इन तीनों के द्वारा त्रिकाल संध्या द्वारा गायत्री उपासना करने वाले को ज्ञान, वैभव एवं सद्गुणों की उपलब्धि होती है। इसी आधार पर एक ही ब्रह्म-महत्त्व सविता को तीन प्रकार से तीन चित्रों में चित्रित किया गया है-

महर्षि याज्ञवल्क्य ने इसी सविता की उपासना का विधान वर्णित करते हुए उसकी महत्ता, विशेषता एवं उपलब्धियों को संक्षिप्त किन्तु सारगर्भित शब्दों में इस प्रकार वर्णन किया है-

ॐ नमो भगवते आदित्याखिलजगतात्मस्वरूपेण कालस्वरूपेण चतुर्विध भूतनिकायानां ब्रह्मादिस्तम्बपर्यन्तानामन्तर्हृदयेषु बाह्येपि चाकाश वद् उपाधि नाऽव्ययधीयमानो भवानेक एव क्षणलवनिमेषावयवोप-चितसंवत्सरगणानामादानविसर्गाभ्यामिमां लोकयात्रामनुवहते।

-याज्ञवल्क्य

मैं ॐकार स्वरूप भगवान् को नमस्कार करता हूँ। हे भगवन्! समस्त जगत् के आत्मा और काल स्वरूप हो। ब्रह्मा से लेकर तृणपर्यन्त जितने प्राणी हैं, उन सबके हृदय में और बाहर भी आकाश के समान व्याप्त रह कर, फिर भी सब उपाधियों से पृथक् होकर आप एक अद्वितीय ईश्वर हैं। आप ही क्षण, लव, निमेष इत्यादि अवयव वाले संवत्सरों द्वारा तथा जल के खींचने तथा प्रदान के द्वारा समस्त जगत् का जीवन-पालन करते हो।

प्रत्येक गायत्री उपासक को जप के साथ ध्यान भी करना चाहिए।

यह ध्यान चाहे माता के रूप में साकार हो अथवा प्रकाश पुञ्ज के रूप में निराकार। दोनों ही स्थितियों में 'सूर्य मण्डल मध्यस्था' की भावना के साथ परम तेजस्वी, सद्बुद्धि प्रेरक, सविता देवता की ध्यान-धारणा अवश्य करनी चाहिए। सावित्री और सविता का अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है। दोनों का अविच्छिन्न युग्म है, इसलिए गायत्री जप के साथ-साथ सविता की ध्यान-धारणा को भुलाया नहीं जाना चाहिए।

ध्यान-साधना से शक्तियों का विकास

"गायत्री को षट्कुक्षि" कहा गया है। "गायत्री से कुण्डलिनी जागरण" नामक ट्रेक्ट में आज्ञाचक्र से लेकर मूलाधार तक षट्चक्रों का विवरण और उनमें सन्निहित शक्तियों, सामर्थ्यों का व्याख्यान किया गया है। षट्कुक्षि का तात्पर्य षट्चक्र जागरण से ही है। शरीर में छिपे हुए छहों शक्ति संस्थान सावित्री उपासना से जाग्रत् हो जाते हैं। किसी मिल में छः इन्जन हों और वे ठण्डे पड़े रहें, तब तो सारी मिल बन्द पड़ी रहेगी, पर यदि वे एक-एक करके सभी चालू हो जाएँ तो मिल अपनी पूरी चाल से चलने लगेगी और उत्पादन का ढेर जमा हो जाएगा। षट्चक्र मानव शक्ति में छिपे हुए अत्यन्त शक्तिशाली वायलर इन्जन जनरेटर हैं। उनके सक्रिय होने पर मनुष्य साधारण जीव नहीं रह जाता, वरन् उसकी गणना सिद्ध पुरुषों में होने लगती है। इस षट्चक्र जागरण के विधि-विधान में सावित्री सान्निध्य को ही प्रधान आधार माना गया है, इसलिए सावित्री को छः कुक्षि वाली- छः साधनाओं वाली - बताया गया है।

पाँच मस्तक, पाँच कोषों के नाम प्रख्यात हैं। अन्नमय कोष, मनोमय कोष, प्राणमय कोष, विज्ञानमय कोष, आनन्दमय कोष यह पाँच आवरण जीव के ऊपर हैं। इनमें से प्रत्येक को एक रत्न भाण्डागार कहना चाहिए। प्रत्येक की शक्ति क्रमशः एक से एक की अधिक है। हम में से अधिकांश व्यक्ति अन्नमय कोष, स्थूल शरीर की क्षमता का ही थोड़ा सा सहारा लेकर भौतिक सुख-साधन जुटाते रहते हैं।

सामान्य मनुष्यों की गति इतनी ही है। पर जो प्रबुद्ध व्यक्ति शेष चार

कोषों को भी समर्थ, सक्रिय, सुविकसित बना लेते हैं, उनकी क्षमता देवोपम होती चली जाती है। कोषों का परिष्कार सावित्री साधना से ही सम्भव होता है। उसे पंचमुखी भी कहते हैं। चित्रों में सावित्री के पाँच मुख भी चित्रित किये जाते हैं। इस बहुमुखी अलंकार का तात्पर्य सावित्री की शक्ति से पाँच कोषों के जागरण की सम्भावना व्यक्त करना ही है।

उसे श्वेत अग्नि की आभा वाली कहा गया है। अर्थात् शुभ्र प्रकाश उसका स्वरूप है। इसी आधार पर उसका ध्यान किया जाता है, सावित्री शक्ति सूर्य जैसे प्रकाश एवं ताप से परिपूर्ण है, उसका ध्यान करने में प्रकाश के मध्य में उपस्थित आकृति की ही भावना करनी पड़ती है। सविता की अधिष्ठात्री होने के कारण वह स्वयं भी प्रकाश पुंज है। प्रकाशयुक्त ही उसका ध्यान करना पड़ता है। साधक को वह अन्धकार से प्रकाश की ओर ले जाती और उसे विशिष्ट ब्रह्मवर्चस, प्रचण्ड ओज एवं प्रखर तेजस्विता प्रदान करती है। इसीलिए उसे शुभ्र अग्नि-वर्ण वाली कहा गया है।

कमल नेत्र का तात्पर्य है बड़ी आँखें। कमल सब पुष्पों में बड़ा एवं सबसे शोभायमान माना गया है। नेत्र देखने का काम करते हैं, कमल नेत्र का अलंकार दूर दृष्टि एवं दिव्य-दृष्टि का संकेत करता है, सावित्री की उपासना साधक को यही विशेषताएँ प्रदान करती है। वह इसकी सम्भावना को देखता है, दूर की बात सोचता है, सुन्दर भविष्य का निर्माण करता है। जो बातें छोटी आँख वालों को, ओछे लोगों को सूझ नहीं पड़ती, वह उस कमल नेत्र वाली सावित्री के भक्तों को सूझती है और वे उपलब्ध दिव्य-दृष्टि के माध्यम से अपना ही नहीं, अन्य असंख्यों का भी कल्याण करते हैं।

सावित्री की महिमा वर्णन करते हुए शास्त्रकार ने उसे तीन पाद वाली, छः कुक्षि वाली, पाँच मस्तक, शुभ्र अग्नि वर्ण एवं कमल नेत्र वाली बताया है। वस्तुतः यह सभी विशेषण उस महाशक्ति में विद्यमान हैं। जो ठीक तरह अविच्छिन्न श्रद्धा और निर्धारित विधि-विधान के साथ उसकी उपासना में संलग्न होता है, उसे किसी भी दिशा में किसी भी क्षेत्र में असफल एवं अभावग्रस्त नहीं रहना पड़ता।

कहा जा चुका है कि सावित्री का देवता सविता है। इसलिए उसे

अधिष्ठान देवता के साथ अविच्छिन्न रूप से सुसम्बद्ध माना गया है। सावित्री उपासना में सविता का आधार लेना ही पड़ता है। सूर्य जैसे प्रकाश के साथ सम्बन्ध करके ही गायत्री का ध्यान किया जा सकता है। गायत्री का चित्र अथवा विग्रह जहाँ कहीं भी होगा, वहाँ प्रकाश मण्डल अवश्य चित्रित किया जायगा। अन्य देवताओं का चित्रण प्रकाश-वलय से रहित भी हो सकता है। पर गायत्री का नहीं। क्योंकि वह सविता की ही शक्ति है। शक्ति और शक्तिमान् का समन्वय तो होना ही चाहिए। इसीलिए गायत्री को- सावित्री को- सूर्य प्रकाश के साथ सदा ही सम्मिलित किया जाता है।

गायत्री स्मरेद्धीमान् हृदि वा सूर्यमण्डले।
कल्पोक्तलक्षणेनैव ध्यात्वाऽभ्यर्च्य ततो जपेत्॥

बुद्धिमान् पुरुष को हृदय में और सूर्यमण्डल में गायत्री का स्मरण करना चाहिए और कल्पोक्त लक्षण से ही ध्यान तथा अभ्यर्चन करके उसके पश्चात् जप करना चाहिए।

आत्मा में अनन्य दिव्य तेज भरा पड़ा है, वह गायत्री का ही भर्ग है। वह तेजस्विता से ही है, जठराग्नि बनकर शरीर का भोजन पचाती, उष्णता प्रदान करती है और गति एवं सक्रियता प्रदान करती है। वही मस्तिष्क में बुद्धि, हृदय में भावना, व्यक्तित्व में प्रतिभा और जीवन में महानता बन कर विद्यमान रहती है। इसी प्रकाश से आत्म-साक्षात्कार, ईश्वर दर्शन का लाभ होता है। आँखों की पुतलियों में जिस प्रकार छोटा सा प्रकाश बिन्दु हमें संसार का सुन्दर दृश्य देख सकने का अवसर देता है। वैसे ही आत्मा में स्थित वह परम तेज हमें तत्त्वदर्शी बनाता है, अज्ञान से छुड़ा कर प्रकाश की ओर से जाता है।

आत्मा का स्वरूप प्रकाशयुक्त माना गया है। ध्यान प्रयोजन में आत्मा को सदा ज्योति मानकर चला जाता है। आत्म-साक्षात्कार ज्योति-पुंज के रूप में ही होता है। आकृतियों वाले इष्टदेव तो हमारे कल्पना चित्र मात्र है जो ध्यान-धारणा में परिपक्वता लाने तक ही काम आते हैं। उससे ऊँची स्थिति में तो ब्रह्म-ज्योति ही एक मात्र अवलम्बन रह जाती है। यही

आध्यात्मिक यज्ञाग्नि है, इसी को आदित्य दिव्य-आभा-अखण्ड-ज्योति कहते हैं। यह आभा जिसे जितनी मात्रा में मिलती जाती है, वह परब्रह्म परमात्मा के साथ सविता-देवता के साथ उतना ही एकाकार होता चला जाता है। संसार के समस्त जड़ चेतन में यही ज्योति प्रकाशमान है। इसी से देव शक्तियाँ और पंच-तत्त्व अपना कार्य कर सकने में समर्थ होते हैं। ग्रह-नक्षत्रों में यही प्रकाश जगमगा रहा है। हमारा कल्याण इस प्रकाश में ओत-प्रोत होने से ही होता है।

कहा भी है-

आदित्यान्तर्गतं यच्च ज्योतिषां ज्योतिरुत्तमम्।
हृदये सर्वभूतानां जीवभूते स तिष्ठति।
हृद्व्योम्नि तपति ह्येष बाह्य सूर्यस्य चान्तरे।
अग्नौ वा धूमकेतौ च ज्योतिषश्चित्रकरश्च यत्।
प्राणिनां हृदये जीवरूपतया य एव भर्गस्तिष्ठति स।
एवं आकाशे आदित्यमध्ये पुरुषरूपतया विद्यते॥

-याज्ञ० सं०

जिस ज्योति की प्रभा से सारे तामसिक भाव दूर हो जाते हैं, वह ज्योति ही श्रेष्ठ वस्तु है, उसे आदित्य के अन्तर्गत समझना होगा। वही समस्त जीव-जगत् के हृदय में चेतयिता (चेतन) बनकर निवास करती है। बाह्य सूर्य के भीतर जो ज्योति आकाश में प्रकाश पाती है, ज्योति जीवन के हृदयाकाश में भी प्रकाश पाती है। वह ज्योति, अग्नि, धूमकेतु, नक्षत्र आदि से भी अधिक उज्ज्वल है। वही भर्ग-देवता प्राणियों के हृदय में जीव रूप में अर्थात् चेतन रूप में विराजमान है। वही बाह्य जगत् के अन्तःकरण में विराट् पुरुष के रूप में विराजमान होकर जगत् को सचेतन करता है।

अग्निश्च मा मन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युकृतेभ्यः
पापेभ्यो रक्षन्ताम्। यदह्ना पापमकार्षम्
मनसा वाचा हस्ताभ्याम् पद्भ्यामुदरेण शिश्ना।
अहस्तदवलुम्पतु। यत्किंच दुरितं मयि।

इदमहं माममृतयोनौ सत्ये ज्योतिषि जुहोमि स्वाहा ॥

(तै०आ० १०-२४)

अग्नि अर्थात् प्रकाशमय और तप अर्थात् ज्ञानमय परमात्मा और उनकी शक्तियाँ उन पापों से मेरी रक्षा करें, जो कि क्रोधादि वृत्तियों के कारण उत्पन्न हुए हैं। जो पाप मैंने दिन में किया है, मन, वाणी या हाथों द्वारा किया है, पैरों, उदर और उपस्थतेन्द्रिय द्वारा किया है, वह लुप्त हो जाय। जो कुछ पाप मुझ में हैं, वह लुप्त हो जाय। यह मैं अपने आपको अमृत की योनि में- जो कि सत्य, ज्योति रूप परमात्मा है, उसमें आहुति रूप देता हूँ- स्वाहा बोल कर देता हूँ।

वेदों में जिस अग्नि का सहस्रों मन्त्रों में वर्णन एवं स्तवन किया गया है। वह चूल्हे में जलने वाली अग्नि नहीं वरन् व्यष्टि और समष्टि को हर दिशा में प्रकाशित, प्रभावित करने वाली दिव्य तेजस्विनी दिव्य-ज्योति है। यही यज्ञाग्नि है। इसी का वैश्वानर रूप में- आदित्य और सविता रूप से पूजन अर्चन किया जाता है। अग्नि और सूर्य में भी वही दिव्य तेजस्विता विद्यमान है, इसलिये उसे उनमें उपस्थित होते हुए भी भिन्न माना गया है। श्रुति कहती है-

योऽग्नौ तिष्ठन्नग्नेरन्तरो यमग्निर्न वेद यस्याग्निः।
शरीरं योऽग्निमन्तरो यमयत्येष त आत्मान्तर्याम्यमृतः ॥

जो अग्नि में रह कर अग्नि से भिन्न है, जिसको लोग नहीं जानते, अग्नि जिसका शरीर है, जो अग्नि के भीतर रहकर अग्नि को नियंत्रित करता है, वही तुम्हारा अन्तर्यामी है।

सावित्री का देवता सविता वह नहीं, जो सबेरे उगता है सायं को अस्त होता है। यह उसकी एक प्रतिमा मात्र है। सूर्य आवरण है और सविता उसकी आत्मा है। जो सर्वत्र प्रकाश, जीव जागृति, चेतना उत्पन्न करता है, वह सविता है। यों दृश्य सूर्य में भी यही गुण हैं, पर आत्मा में इन विशेषताओं का प्रेरक एवं संस्थापक सविता परब्रह्म परमात्मा ही है। सावित्री उसी की अविच्छिन्न शक्ति है। इन दोनों का अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है। एक का कार्य

दूसरे पर पूर्णतया निर्भर है। एक देवता है, दूसरा देवी। एक प्राण दो शरीर की तरह दोनों को अविभाज्य ही समझना चाहिए।

सावित्री-गायत्री के माध्यम से ही सविता परब्रह्म तक हमारी पहुँच हो सकती है। माता के द्वारा ही पिता से सम्बन्ध और परिचय होता है। माता का माध्यम न हो तो पिता का परिचय, सम्बन्ध एवं अनुग्रह प्राप्त हो सकना किसी प्रकार सम्भव नहीं हो सकता। ठीक इसी प्रकार गायत्री महाशक्ति का सहारा लिये बिना परब्रह्म के सृष्टि साम्राज्य में आत्मा को खुल कर खेलने-युवराज बनने और अनन्त ऐश्वर्य पर अधिकार करने का भी सौभाग्य नहीं मिल सकता।

उपनिषद् में इस तथ्य को और भी विस्तारपूर्वक-विवेचना एवं उदाहरणों के साथ प्रस्तुत किया गया है, उल्लेख इस प्रकार मिलता है।-

कस्सविता का सावित्री ?
अग्निरेव सविता पृथिवी सावित्री।
कस्सविता का सावित्री ?
वरुण एव सविताऽऽपस्सावित्री॥
कस्सविता का सावित्री ?
वायुरेव सविताऽऽकाशस्सावित्री।
कस्सविता का सावित्री ?
यज्ञ एव सविता छन्दांसि सावित्री॥
कस्सविता का सावित्री ?
स्तनयित्नुरेव सविता विद्युत्सावित्री।
कस्सविता का सावित्री ?
आदित्य एव सविता द्यौस्सावित्री॥
कस्सविता का सावित्री ?
चन्द्र एवं सविता नक्षत्राणि सावित्री।
कस्सविता का सावित्री ?
पुरुष एव सविता स्त्री सावित्री॥

एवं ज्ञात्वा विद्वान् कृतकृत्यो भवति, सावित्र्या एव सलोकतां जयतीत्युपनिषद्।

– सावित्र्युपनिषद् १-९-१

सविता और सावित्री कौन हैं? इस प्रश्न के उत्तर में कहा गया है कि अग्नि सविता है, पृथ्वी सावित्री है वरुण सविता है और जल सावित्री है। वायु सविता है और आकाश सावित्री है। यज्ञ सविता है और ऋचा सावित्री है। मेघ सविता है और विद्युत् सावित्री है। सूर्य सविता है और आकाश सावित्री है। चन्द्र सविता है और नक्षत्र सावित्री है। मन सविता है और वाणी सावित्री है। पुरुष सविता और स्त्री सावित्री है, इस सर्व व्यापक तेजोमय सावित्री को जो विद्वान् जानते हैं। वे कृतकृत्य हो जाते हैं। सावित्री से ही सालोक्य मोक्ष प्राप्त होता है।

प्रश्नोत्तर के रूप में सविता सावित्री का रूप उपर्युक्त मंत्र में पूछा है और उसी में उदाहरण समेत समाधान भी किया गया है। सविता और सावित्री के जोड़े को उदाहरण समेत अन्य युग्मों के सदृश बताकर जिज्ञासु की शंका का समाधान किया गया है।

जल दृश्य पदार्थ है- वरुण उसकी अधिष्ठात्री शक्ति- आत्मा है। वायु का निवास आकाश में है। आकाश न हो तो वायु कहाँ रह सकेगी? वायु न हो तो आकाश का उपयोग क्या रहेगा? इसी प्रकार आदित्य की निर्भरता द्युलोक पर है।

मन्त्र बड़ा है, उसमें कितने ही युग्मों का उदाहरण देकर जिज्ञासु को यही तथ्य हृदयंगम कराने का प्रयत्न किया गया है कि जीवन का साध्य लक्ष्य ब्रह्म है और उसका साधन- गायत्री। यदि किसी को, वस्तुतः ब्रह्म को प्राप्त करना हो। ब्राह्मी स्थिति, ब्रह्म परायणता-ब्रह्म निर्वाण एवं ब्राह्मणत्व उपलब्ध करने की आकांक्षा करता हो तो उसे ब्रह्म-तेज की- ब्रह्मवर्चस की अधिष्ठातृ देवी-सावित्री-गायत्री का अवलम्बन ग्रहण करना चाहिए।

सविता पर एक वैज्ञानिक दृष्टि

विश्व रचना के दो प्रधान तत्त्व हैं- एक प्राण (इसे आध्यात्मिक भाषा में 'देव' भी कहते हैं) दूसरा भूत। इन दोनों तत्त्वों का जहाँ भी मिलन हो जाता है, वहीं दृश्य प्रकृति, गतिमान् और क्रियाशील जीवन के दर्शन होने लगते हैं। केवल 'भूत' पदार्थ प्राण के बिना स्पन्दन नहीं कर सकता। इसलिए भौतिक जगत् में जहाँ भी जीवन तत्त्व है, वह प्राण ही है इसे ही गायत्री कहते हैं।

मनुष्य शरीर में यह दोनों शक्तियाँ स्पष्ट रूप से प्रकट होती है। बाल्यावस्था में छोटा सा पंच भौतिक पदार्थों का पिण्ड छोटा सा प्राण धारण किये हुए था, तब उसकी शक्ति और तेजस्विता कम थी, पर जैसे-जैसे शरीर का विकास होता है और शरीर में प्राण की मात्रा बढ़ती है, शक्ति और क्रियाशीलता भी बढ़ती है, अवस्था के इस क्रम में बाल्यावस्था, यौवन और वृद्धावस्था को 'गायत्री समिधा' कहा गया है, क्योंकि प्राण तत्त्व इन्हीं में जलता है।

उसके बाद दोनों तत्त्व फिर अलग-अलग हो जाते हैं, प्राण निकल जाता है और पंचभूतों से बना हुआ नितान्त प्राकृत शरीर पड़ा रह जाता है। इस छूटे हुए शरीर को ऋग्वेद में-

यद् गायत्रे अधि गायत्रमाहितम्।

- १/१६४/२३

अर्थात् पंचभूतों से बना शरीर मर्त्यगायत्री है। इसमें सोचने, समझने, सुख-दुःख अनुभव करने, क्षोभ और विकलता व्यक्त करने वाली शक्ति प्राण थी। शरीर निस्पन्द और अनुभव-हीन होता है। इसलिए सुख-दुःख ही नहीं मनुष्य जीवन की सारी हलचलें, परिवर्तन, गति, उन्नति, अवनति का कारण भी प्राण ही है।

यदि सूक्ष्म रूप से विचार करें तो ऐसा मालूम पड़ेगा कि जो प्राण शरीर के विभिन्न क्षेत्रों में क्रियाशील रहता है, वह भी भौतिक है। किरणें ज्योति या अग्नि जैसा स्थूल तत्त्व कह सकते हैं, उसे नियन्त्रित और प्रेरित

करने वाली एक तीसरी मनोमय शक्ति है। इसी की इच्छा और संकल्प शक्ति से शरीरगत व्यापार चलते हैं। इसलिए गायत्री-इस एक शब्द में ही पंच-भौतिक, प्राण और मन-त्रिक शक्ति का समग्र रूप आ जाता है। शास्त्रों में इसे भौतिक क्लेश और प्रपंच से मुक्ति दिलाने वाली विद्या कहा गया है। अर्थात् जो विचारपूर्वक इन तीनों शक्तियों का अलग-अलग अनुभव करते हैं, फिर उनकी अधोगति नहीं होती। 'तुमहिं जानि कछु रहे न शेषा, तुमहिं पाय कछु रहे न क्लेशा।' यही गायत्री शक्ति की स्तुति है, जो अब विज्ञान समस्त भी है।

गायत्री का आविर्भाव कहाँ से होता है। यह प्रश्न उठता है तो उपनिषद्कार कहते हैं-

देवात्मशक्तिम् स्वगुणैर्निगूढम्। - श्वेता० १.३

देव आत्मा या इन्द्र शक्ति ही वह सत्ता है, जो विश्व गायत्री अर्थात् अनेक रूपों मे विकसित होता है। यह देवशक्ति या इन्द्र कौन है?

तस्य दृश्यः शतादश

सूर्य ही वह इन्द्र है, जिसकी हजारों किरणें हैं। एक-एक किरण एक-एक रूप है, इन किरणों में प्राण शक्ति भरी है। सूर्य को त्रयी विद्या भी कहा गया है। अर्थात् सूर्य स्वयं भी एक वैसी ही गायत्री है, जिस तरह की एक गायत्री शरीर और प्राण मनोमय रूप में धरती में विद्यमान रहती है। इस तरह यदि सूर्य को एक विराट् पुरुष की संज्ञा प्रदान करें- जो एक व्यापक क्षेत्र में बिलकुल मनुष्य की तरह क्रियाशील रहता है। सोच विचार भी कर सकता है, विकल और क्षुब्ध हो सकता है। दण्ड और पुरस्कार दे सकता है। हर्ष और शोक, सन्तोष और असन्तोष व्यक्त कर सकता है, तो उससे कोई आश्चर्य नहीं होना चाहिए।

मनुष्य एक छोटी गायत्री- सूर्य एक विराट् गायत्री। छोटी गायत्री को जब विराट् गायत्री के साथ जोड़ देते हैं, तो वह भी वैसी ही शक्ति और सम्पन्नता अनुभव करने लगती है, जैसे धनवान् पिता का पुत्र पास में कुछ न होने पर भी अपने पिता की तरह ही धन का अभिमान और कुछ भी कर्म

कर सकने का विश्वास कर सकता है। अर्थात् गायत्री के विराट् स्वरूप को पा जाने पर मनुष्य भी उतनी क्षमता वाला हो सकता है, जितनी सूर्य भगवान् की, इसे ही शक्ति अथवा सिद्धि कहते हैं।

यह जानना आवश्यक है कि क्या सचमुच सूर्य मनुष्य की तरह त्रिक शक्ति वाला विराट् पुरुष-जिसमें मनुष्य की तरह सम्वेदनशीलता हो-हो सकता है?

सूर्य रश्मियों के वर्णन में वैज्ञानिक यह कहते हैं कि तीन रंगों का (सात रंग इन तीन रंगों के मिश्रण से बनते हैं, मूल रंग तीन ही हैं।) सम्मिश्रण है। स्पेक्ट्रोमीटर के द्वारा इन रंगों को- अलग-अलग भी कर दिखाया जा सकता है। यदि मनुष्य और सूर्य में ऐसा कुछ साम्य है तो मनुष्य शरीर में इन रंगों को परिलक्षित होना चाहिए,पर यहाँ तो रक्त का रंग भी लाल है फिर साम्य कहाँ हुआ?

विज्ञान के विद्यार्थी जानते होंगे कि रक्त का लाल रंग नहीं है, कई तत्त्वों के सम्मिश्रण से वह लाल दिखाई देता है, अन्यथा रक्त के जीवाणु विशुद्ध पीले रंग के होते हैं। आजकल पूर्ण मृत्यु का पता लगाने के लिए त्वचा में 'यूरेनाइन' नाम का इन्जेक्शन दिया जाता है, यदि मनुष्य की मृत्यु नहीं हुई और रक्त संचार हो रहा है तो त्वचा का रंग पीला और हरा हो जाता है, नीला रंग लाल रंग की गहराई के कारण दृश्य नहीं हो पाता, अन्यथा ऐसी विधि से शरीर की इस त्रिक शक्ति का स्पष्ट विश्लेषण हो जाता है। मृत देह में इन्जेक्शन का कोई प्रभाव नहीं होता।

प्रत्यक्ष निर्विकार दिखाई देने वाले सूर्य के सम्बन्ध में सर्वप्रथम इन्गोलस्टाड के पादरी क्रिस्टांफ शाइनर ने एक संदेश अपने अध्यक्ष पादरी को दिया था कि उसमें काले-काले धब्बे विद्यमान हैं। लेकिन अरस्तु के ग्रन्थ में ऐसा कुछ नहीं था, इसलिए बेचारे शाइनर को कड़ी डाँट-फटकार सुननी पड़ी, किन्तु सौभाग्य से उन्हीं दिनों गैलीलियो ने दूरदर्शक यन्त्र की सहायता से इस बात की पुष्टि कर दी कि सूर्य में सचमुच धब्बे हैं और धब्बे हलचल करते रहते हैं। कभी फूटकर फैल जाते हैं। कभी एक धब्बा लुप्त हो

जाता है और उसके पास का धब्बा कोंधने लगता है। कई बार वे कई भागों में बँट जाते हैं और फिर कई-कई मिलकर एक हो जाते हैं पहले तो इन हलचलों का कारण वैज्ञानिक नहीं जान सके थे, पर धीरे-धीरे पता चला कि यह सब तपी गैसों के बृहत् बवण्डर हैं और वे बिल्कुल मनुष्य की-सी इच्छा शक्ति से मेल खाते हैं।

सूर्य भगवान् का दृश्य और क्रिया क्षेत्र बहुत व्यापक है। पृथ्वी ही नहीं अनेक ग्रह नक्षत्रों तक व्याप्त है। मनुष्य की शक्ति उसकी आँखें ऐसी नहीं हैं कि वह उतने व्यापक क्षेत्र को देख सकें, किन्तु जब वह अपना सम्बन्ध सूर्य देव के साथ जोड़ लेता है। (ध्यान-विज्ञान के द्वारा यह स्थिति काफी दिन में आ पाती है) तो वह भी उसी तरह न केवल पृथ्वी की हलचलों और परिवर्तनों का जानकार हो जाता है, वरन् उसे ब्रह्माण्डों के भी रहस्य ज्ञात होने लगते हैं, यही नहीं वह एक अंश तक उन परिवर्तनों के साथ अपनी सम्मति भी जोड़ कर उन्हें कुछ कम या ज्यादा कर सकता है। अर्थात् इस तरह के कोई आध्यात्मिक पुरुष बड़ी-बड़ी दैवी हलचलों का ज्ञान ही नहीं प्राप्त करते, इन्हें कम या बिल्कुल ही समाप्त भी कर सकते हैं।

किसी प्रकार गायत्री मनुष्य जीवन में प्रादुर्भाव के स्वरूप को व्यक्त करते हुए शास्त्रकार ने बताया कि 'मनः एव सविता' अर्थात् मन ही सविता है। तात्पर्य यह है कि जब मन और सूर्यदेव का तादात्म्य करते हैं (जप और सूर्य तेज मध्यस्था गायत्री का ध्यान करते हैं) तो प्राणायाम होता है, अर्थात् सूर्यदेव की भर्ग शक्ति मनुष्य के अन्तःकरण में प्रवेश करती है और प्रकृति से सामंजस्य स्थापित करती है, अर्थात् यदि प्रकृति कहीं दूषित हो रही है (कोई रोग के रूप में) तो उसे ठीक करती है। इसी का नाम असत् संस्कारों का निष्कासन और सत्संस्कारों का विकास होता है। जब तादात्म्य की स्थिति ऐसी हो जाये कि मन का ध्यान करते हुए मन की अग्नि और सूर्य रूप दोनों एक हो जायें। कोई और विकल्प की कल्पना हो ही नहीं, तो उसे गायत्री सिद्धि कहेंगे। तब गायत्री की सम्पूर्ण अनुभूति और शक्ति का स्वामी वह मनुष्य होगा और उन क्षमताओं से प्रकृति में परिवर्तनों की शक्ति से

विभूषित होगा, जिनकी ऊपर व्याख्या की गई है।

शास्त्रकार ने कहा था कि एक गायत्री मनुष्य है और दूसरी विद्या शक्ति सूर्य। दोनों में विलक्षण साम्य है। यह विषय अब विज्ञान भी सिद्ध करने लगा है, इसका थोड़ा सा अनुमान इन पंक्तियों में होगा। विस्तृत ज्ञान तो तब हो, जब गायत्री तत्त्व का भी विस्तृत साधन और अवगाहन करें। यह वह विद्या है, जो शरीर, बुद्धि और अन्त:करण तीनों में हस्तक्षेप रखने के कारण शरीर बल, सांसारिक बल और आत्म बल देकर अपने उपासक का भारी हित सम्पादित कर सकती है, करती भी है।

मुद्रक: युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा